भारतीय किसान- दशा और दिशा

नीलमणि शर्मा
निजी सचिव, संस्कृति मंत्रालय

भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि की महत्वपूर्ण भूमिका है। कृषि हमारे आर्थिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक उन्नति का माध्यम रही है। भारत के लोग कृषि को एक उत्सव के रूप में मनाते रहे हैं। प्रकृति एवं पर्यावरण की रक्षा के दायित्व का निर्वहन, जिसमें वृक्ष, नदी, पहाड़, पशुधन, जीव-जंतु की रक्षा की जिम्मेदारी निभाना, जीवन के महत्वपूर्ण आध्यात्मिक कार्य का हिस्सा रहा है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार 54.6 प्रतिशत आबादी कृषि और उससे संबंधित कार्यों में लगी हुई है। वर्तमान कीमतों के अनुसार वर्ष 1950-51 में भारत की जीडीपी में कृषि का योगदान 51.81 प्रतिशत था, जो वर्ष 2013-14 में 18.20 प्रतिशत रह गया। केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय (सीएसओ) के अनुसार वर्ष 2016-17 में कृषि और संबंधित क्षेत्रों का योगदान गिरकर 17.4 प्रतिशत रह गया।

आज तक हम यह निर्णय नहीं कर पाए हैं कि किसान की परिभाषा सही मायने में क्या है? उन्हें किसान कहते हैं, जिनकी अपनी जमीन होती है, या जो हल जोतते हैं। धनी किसान वे किसान हैं, जो ग्रामीण गृहस्थ उत्पादन के साधन रखते हैं। वह भूमि पर स्वयं श्रम करता है। वह खेती से अधिकांश आय प्राप्त करता है। मध्यम किसान पट्टे की अथवा निजी भूमि रखता है। उस पर स्वयं या उसके परिवार तथा श्रमिक खेती करते हैं। साधारण वर्षों में वह अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। फसल की बुरी हालत में वह अस्थायी रूप से ऋणग्रस्त हो जाता है। छोटा किसान पट्टा या फिर निजी भूमि रखता है। इससे उसकी मुख्य आय होती है। यह श्रमिक नहीं लगाता। वह स्वयं मजदूरी करता है। खेतिहर मजदूर वर्ग के पास न तो भूमि ही रहती है न ही उपकरण वह कृषि या कृषिगत कार्य में श्रम बेचकर जीवनयापन करता है। देश में 90 प्रतिशत से अधिक किसान छोटे या सीमांत किसान हैं। इनके खेतों की जोत 5 एकड़ से भी कम है।

किसान कौन है?

कृषक शब्द का अर्थ रेडफील्ड ने इस प्रकार दिया है, ''कृषक वे छोटे उत्पादनकर्ता हैं, जो केवल उपयोग के लिए ही उत्पादन करते हैं।'' राष्ट्रीय किसान नीति में ''कृषक'' शब्द के अंतर्गत आते हैं-''जो भूमिहीन कृषि श्रमिक, बंटाईदार, काश्तकार, लघु, सीमान्त और उप-सीमान्त खेतीहर, बड़े धारणों वाले किसान, मछेरे, डेयरी, भेड़, कुक्कुट व अन्य किसान जो पशुपालन में लगे हों। इसके साथ ही बागान श्रमिक और साथ ही वे ग्रामीण और जनजातीय परिवार शामिल हैं, जो कृषि संबद्ध व्यवसायों, जैसे कि रेशम पालन और कृषि पालन के अनेक कार्यों में लगे हैं। इसमें वे जनजातीय परिवार सम्मिलित हैं, जो कभी-कभी भूमि, खेती में और गैर-इमारती लकड़ी वन उत्पादों के संग्रह तथा उपयोग में लगे हैं।

स्वतंत्रता पूर्व किसान आंदोलन

भारतीय संस्कृति में पर्व-त्योहार, रीति-रिवाज, संस्कार, कर्मकांड आदि खेती से जुड़े हुए हैं। खेती ही भारत के आत्मनिर्भर होने का मूल आधार थी लेकिन अंग्रेजों ने भारत की अर्थव्यवस्था को नष्ट करने के लिए भूमि व्यवस्था को बदलकर जमींदारी प्रथा आरंभ की। इससे वास्तविक किसान निरंतर गरीब होते रहे। खेती पर देश की आत्मनिर्भरता नष्ट होती गई। भारत में किसान आंदोलन का लगभग 200 वर्षों का इतिहास है। 19वीं शताब्दी में बंगाल का संथाल एंव नील विद्रोह तथा मद्रास एवं पंजाब में किसान आंदोलन इसके उदाहरण हैं। भारतीय किसान आंदोलन की राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका रही। किसान आंदोलन और राष्ट्रीय आंदोलन का अटूट रिश्ता था। अप्रैल, 1917 में नील कृषकों द्वारा बिहार के चम्पारण जिले में गांधी जी के नेतृत्व में चलाया गया किसान संघर्ष देश का राजनीतिक दृष्टि से पहला संगठित आंदोलन था। अंग्रेजी शासन ने किसानों के संघर्षों को दंगों और न्याय तथा कानून से संबंधित प्रशासनिक समस्या के रूप में देखा था। किसान आंदोलन वहीं उभरे जहां राष्ट्रीय आंदोलन की नींव पड़ चुकी थी उदाहरण के लिए केरल, पंजाब, आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश और बिहार।

वर्ष 1908 में ''हिंद स्वराज'' में गांधी जी ने किसानों को आत्मबल युक्त समुदाय के रूप में देखा था और उसे सत्याग्रह का परंपरागत प्रयोगकर्ता बताया था। उनके अनुसार हिंदुस्तान का अर्थ मुट्ठीभर राजागण न होकर वे करोड़ों किसान हैं, जिनके सहारे राजा और अन्य सभी जी

रहे हैं। किसान किसी के तलवार बल के बस में न तो कभी हुए हैं और न होंगे। वे तलवार चलाना नहीं जानते, न किसी की तलवार से वे डरते हैं। वे मौत को हमेशा अपना तकिया बनाकर सोने वाली महान प्रजा है। उन्होंने मौत का डर छोड़ दिया है, इसलिए सबका डर छोड़ दिया है।'' मदन मोहन मालवीय, इन्द्र नारायण द्विवेदी और गौरी शंकर मिश्र आदि के प्रयासों से फरवरी, 1918 में अवध में किसान सभा का गठन हुआ था। अवध किसान सभा ने किसानों से बेदखली जमीन को जोतने और बेगार न करने की अपील की थी। जनवरी, 1920 के बाद से स्थानीय लोगों की पहल पर आधारित किसानों के संघर्षो को दबाने के लिए कई बार किसानों पर गोलियां चलाई गई। नेताओं और कार्यकर्ताओं को गिरतार किया गया, उन पर मुकदमा चलाया गया।

वर्ष 1920 से 1932 के बीच अवध, पंजाब और बिहार में हुए अधिकांश किसान आंदोलन, मध्य वर्गीय संपन्न कृषकों द्वारा चलाये गये थे। विश्व आर्थिक संकट 1925-30 के फलस्वरूप किसान की स्थिति निरंतर बिगड़ती चली गई। मंदी के कारण कृषि उपजों की कीमत काफी गिर गयी थी। यह स्थिति उसे संघर्ष की ओर ले गयी। इसी माहौल में वर्ष 1930 में सिविल नाफरमानी आंदोलन छेड़ा गया। वर्ष 1928 में किसानों को ''बारदोली सत्याग्रह'' में सफलता मिली। वर्ष 1937 में किसान आंदोलन का एक नया दौर शुरू हुआ। वर्ष 1937 से 39 तक किसान आंदोलन के उत्कर्ष के वर्ष थे। किसानों में जागरूकता पैदा करने का मुख्य माध्यम था थाना, तालुका, जिला और प्रांत के स्तर पर किसान सभाएं या सम्मेलन आयोजित करना। वर्ष 1938 में पटना में एक बड़ा प्रदर्शन हुआ, जिसमें लगभग एक लाख किसानों ने हिस्सा लिया। किसान आंदोलन द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ जाने के कारण रूक-सा गया। युद्ध समाप्त होने पर पंजाब और बिहार में मांग उठी की तुरंत जमींदारी उन्मूलन हो। तेलंगाना में किसानों ने संगठित रूप से जमींदारों के अत्याचार का प्रतिरोध किया।

स्वतंत्रता के पश्चात किसान आंदोलन

स्वतंत्रता से पूर्व और स्वतंत्रता के बाद भारत में एक लंबी अवधि व्यतीत होने के बाद भी भारतीय किसानों की दशा में सिर्फ 19-20 का ही अंतर दिखाई देता है। समृद्ध किसानों की गिनती उंगलियों पर की जा सकती है। आज भी खेती-किसानी गहरे संकट में। खेती के विकास की ''हरित क्रांति'' का कंपनियों के पक्ष में ही लाभ होता दिखाई दे रहा है। भारत की पहचान जहां उन्नत खेती तथा खेती से जुड़े उद्योगों, कलाओं, उत्पादों और कारोबारों से थी वहां स्वतंत्रता के बाद प्राथमिकता उद्योग और उससे जुड़े तकनीकी विकास एवं व्यवसाय हो गए। इसमें खेती पर संकट उत्पन्न होने के साथ ही किसानों को भी संकटग्रस्त होना पड़ा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राज्य के संरक्षण में प्राय: सभी राज्यों में भूमि सुधार संबंधी नये कानूनों के निर्माण के बाद किसानों के बीच एक नये भू-स्वामी वर्ग का उदय हुआ। वर्ष 1950 में हिंद किसान पंचायत के प्रथम राष्ट्रीय अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण में लोहिया ने नये परिवेश में किसान आंदोलन के लिए निम्न लक्ष्य बताए-जोतने वाले को तुरंत सरकारी आदेश द्वारा जमीन दी जाए, परती जमीन के लिए भूमि सेना बनाई जाए, छोटी मशीनों द्वारा औद्योगीकरण किया जाए, जमीन का पुनर्वितरण हो और प्रत्येक परिवार को 20 बीघा जमीन और ग्राम मिले, खेतिहर वस्तुओं और औद्योगिक वस्तुओं की कीमत में सामंजस्य होना चाहिए।

पिछले तीन दशकों में अनेक सशक्त किसान आंदोलन हुए। तमिलनाडु, कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, हरियाणा आदि राज्यों में लाखों की संख्या में किसान अपनी मांगों को लेकर सड़कों पर निकले। बाद में उड़ीसा, राजस्थान आदि में भी किसानों ने आंदोलन किए। अस्सी और नब्बे के दशक में भारत में अनेक किसान आंदोलन हुए। किसानों के बड़े-बड़े धरने एवं रैलियां हुई। इनमें लाखों किसानों ने भाग लिया। किसानों का शोषण, कृषि उपज का उचित दाम न मिलना, किसानों पर बढ़ता कर्ज, किसानों पर बढ़ते हुए शुल्क, बिजली के बढ़ते बिल आदि उनके प्रमुख मुद्दे थे। लेकिन किसानों की प्रमुख मांगें पूरी होना तो दूर उनकी हालत और खराब होती गई। वैश्वीकरण की नीतियों ने उसे बड़ी संख्या में आत्महत्याओं के कगार पर पहुंच दिया।

नेशनल एकाउंट्स डाटा के अनुसार कृषि अपने बुरे दौर से गुजर रही है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार प्रतिवर्ष औसतन 15,168 किसान आत्महत्या को मजबूर हो रहे हैं। इनमें के लगभग 72 प्रतिशत ऐसे छोटे किसानों की है, जिनके पास 2 हेक्टेयर से भी कम जमीन है। पिछले दिनों देश के लगभग 187 किसान संगठन संसद मार्ग पर अपनी मांगों को लेकर आंदोलन करते रहे। पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में कर्जमाफी एवं समर्थन मूल्य में वृद्धि की मांग पर किसान संघर्षरत हैं। मंदसौर में पुलिस की गोली से छह किसानों की मौत हुई। महाराष्ट्र में भी ऐसी ही घटनाएं हुई। भीषण सूखे और सर्वाधिक किसान आत्महत्या के बाद विदर्भ क्षेत्र मौत का गवाह बना। यवतमाल सहित इस क्षेत्र में 40 से अधिक किसानों की मौत जहरीली अवैध कीटनाशकों की वजह से हुई।

किसान आंदोलन की असफलता के लिए उनका नेतृत्व मुख्य कारण रहा। किसानों की मांगों को पूरा करने के लिए सरकारी नीतियों को बदलने और सत्ता को प्रभावित करने के लिए कोई संयुक्त रणनीति या योजना नहीं बनाई गई। अन्य शोषित और वंचित तबकों के आंदोलनों के साथ किसान आंदोलन एकता स्थापित नहीं कर पाया। किसानों की संख्या मजदूरों से अधिक होने के कारण किसान आंदोलन ट्रेड यूनियन की तरह नहीं चलाया गया।

किसानों और खेती पर संकट

आज देश में खेती का योगदान कुल अर्थव्यवस्था में 14 प्रतिशत के लगभग होने पर भी इससे गरीब 60 प्रतिशत लोगों को रोजगार मिल रहा। लेकिन भारत में अभी तक खेती और किसान को अर्थनीति में जितना महत्व मिलना चाहिए था, वह नहीं मिल पाया है। भारत की रचना ऐसी है कि जब तक खेती संकट से नहीं निकलेगी किसान खुशहाल नहीं हो सकता। यहां खेत का औसत आकार 1.15 हैक्टेयर है, जो काफी छोटा है। यह आकार 1970-71 से लगातार घट रहा है। लघु और सीमांत भू-स्वामित्व 2.0 हैक्टेयर से कम है, जो कुल भू-स्वामित्व का 72 प्रतिशत है। छोटी काश्तकारी की प्रधानता कृषि क्षेत्र में बड़े पैमाने पर आर्थिक किफायत की राह में मुख्य बाधा है। इसके अतिरिक्त छोटे और सीमांत किसानों के पास मोलभाव की शक्ति कम है क्योंकि उनके पास बिक्री योग्य अधिशेष कम होता है और वे बाजार की कीमत स्वीकार करने वाले होते हैं। बड़े पैमाने पर कृषि के लाभ के लिए लघु क्षेत्र वाले किसानों की बहुलता एक बड़ी चुनौती है।

भारत में 60 प्रतिशत खेती बारिश पर आधारित है। केवल 40 प्रतिशत खेती के लिए सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं। काफी समय से फसलों के सही दाम की मांग की जा रही है। किसानों को उनकी फसल का उचित मूल्य मिलना चाहिए। इसी आधार पर न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) प्रणाली शुरू की गई थी। पहले केवल गेहूं और धान के लिए यह व्यवस्था की गई, वर्ष 1986 में यह 22 जिलों के लिए लागू किया गया है।

पंजाब, हरियाणा, पूर्वी व उत्तरी राजस्थान, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश और पश्चिमी उत्तर प्रदेश आदि को छोड़कर कहीं भी एमएसपी पर फसल खरीदने की कोई व्यवस्था नहीं है। इस कारण किसान साल भर मेहनत करके फसलें तैयार करता है लेकिन उसे लागत भी नहीं मिल पाती, जबकि बिचौलिए मोटा लाभ कमा रहे हैं। लेकिन इसमें भी अनेक खामियां हैं, जिन्हें दूर करने की आवश्यकता है। इन खामियों को दूर करने के लिए किसान आयोग का गठन किया गया था। फल एवं मौसमी सब्जियों का न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारित नहीं होता। जिन फसलों का एमएसपी निर्धारित होता है, वह भी किसानों को नहीं मिल पता है।

संघर्ष भरा कृषक जीवन

हमारी कृषि आबादी में प्रत्येक वर्ष 1.84 प्रतिशत की वृद्धि हो रही है। औसत जोत आकार प्रत्येक वर्ष छोटा होता जा रहा है। खेती की लागत, जोखिम प्रतिफल पद्धति प्रतिकूल होती जा रही है। इसका परिणाम यह हुआ कि किसान अधिकाधिक ऋणी होते जा रहे हैं। आजादी के बाद और उदारीकरण, औद्योगीकरण एवं अन्य आर्थिक-सामाजिक सुधारों के माध्यम से उद्योगों का कायाकल्प हुआ और उद्योगों को घाटे से उबरने के लिए करोड़ों रुपये की सरकारी राहत दी जाती रही है लेकिन जब कृषि क्षेत्र की बात आती है, किसानों के कर्ज की बात आती है तो इतनी कम राशि दी जाती है, उससे किसानों को लाभ तो नहीं होता है, हां उनका मखौल जरूर उड़ाया जाता है।

किसानों की बेहाली का अंदाजा उसके कर्ज पर लगाया जा सकता है। कृषि राज्य मंत्री पुरुषोत्तम रुपाला ने नवंबर, 2016 में जानकारी दी कि किसानों पर वर्तमान में देशभर के किसानों पर 12 लाख 60 हजार करोड़ रुपये का कर्ज है। इसे माफ करने के लिए राज्य सरकारों के पास पैसा ही नहीं है। जो किसान प्रकृति की रक्षा के साथ सभी जाति वर्ग को कृषि से रोजगार देता था, आज वह समय के साथ अपने में बदलाव नहीं करने के कारण संकटों से जूझ रहा है।

कई बार किसान खुद को जमीन में गाड़कर विरोध प्रदर्शन कर रहे हैं। पिछले लगभग 20 वर्षों से भारत के किसान लगातार आत्महत्या करने पर मजबूर हो रहे हैं। वर्ष 1997-98 में किसानों द्वारा की गई आत्महत्या विदर्भ, महाराष्ट्र के बाद बुंदेलखंड, आंध्र प्रदेश और तेलंगाना में भी सिलसिला शुरू हो गया। एनसीआरबी की रिपोर्ट के अनुसार पहली बार वर्ष 1997 में आत्महत्याओं को रिकार्ड में दर्ज किया गया। इसके अनुसार वर्ष 1997-98 में लगभग 6,000 किसानों ने आत्महत्याएं कीं। किसानों की आत्महत्याओं का पहला कारण ऋण और दूसरा प्राकृतिक आपदाओं से फसल का नुकसान है। इसके साथ ही कृषि उपज से होने वाली कमी, खराब बीज और उर्वरक की उपलब्धता भी अन्य कारण है। इस कारण एक बड़ा वर्ग किसानी छोड़ रहा है। वह किसानी की बजाय शहरी मजदूरी को अच्छा समझने लगा है। विदेशी कंपनियों ने भी बेतहाशा शोषण किया है। देशी बीज और खाद के स्वरूप को कुछ देशी और कुछ विदेशी कंपनियों ने खत्म कर दिया है।

अक्सर यह देखा जाता है कि अनाज क्रय केंद्र पर दलालों की मिलीभगत से अनाज व्यवसायी ही किसानों से सस्ते दर पर खरीद कर क्रय केंद्र पर अपना अनाज बेच देते हैं। इससे न्यूनतम समर्थन मूल्य पर किसान अपना अनाज बेचने में सफल नहीं हो पाता है। जमाखोर किसानों के उत्पाद का उचित मूल्य नहीं दे रहे है। उदाहरण के लिए किसानों से कई बार प्याँज 2 रुपये किलो की दर से खरीदने के बाद जमाखोर 60 रुपये की दर से बेच देते हैं।

भूमि अधिग्रहण को लेकर भी देश भर के किसानों में असंतोष बढ़ा है। वर्ष 2013 में देश में अंग्रेजी राज के भूमि अधिग्रहण कानून को बदलकर नया कानून बनाया गया है। इस कानून में भी अनेक खामियां हैं। उचित मुआवजे के लिए किसान अदालत के दरवाजे खटखटा रहे हैं। किसानों की स्थिति सुधारने के लिए आवश्यक है कि ऐसे उपाय किए जाएं, जिनसे न सिर्फ उनकी आय बढ़े बल्कि फसल की पैदावार भी हो।

देश में 15 अक्तूबर को ''महिला किसान दिवस'' मनाया जाता है लेकिन महिला किसानों को सामाजिक स्तर पर एक पहचान कब मिलेगी, इसका कुछ पता नहीं है। महिला किसान के सामने यह समस्या है कि वह पुरुष किसान से अधिक कृषि में केंद्रीय भूमिका निभाने के साथ ही घरेलू कार्य भी करती हैं लेकिन उसे पुरुष किसान के सहयोगी तक ही सीमित समझा जाता है, जबकि अंतरराष्ट्रीय खाद्य संस्थान (एफएओ) के अनुसार कृषि में यदि महिलाओं को पुरुषों के समान संसाधनों का प्रयोग करने का समान अवसर मिले तो वे उपज में 20 से 30 प्रतिशत की बढ़ोतरी कर सकती हैं। विकासशील देशों में यह कृषि की औसत उपज को 2.5 से 4 प्रतिशत तक बढ़ाने में सक्षम है। वर्ष 2010-11 कृषि जनगणना की रिपोर्ट के अनुसार भारत में केवल 12.78 प्रतिशत कृषि जोत महिलाओं के नाम पर हैं। यह एक विडंबना है कि 85 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएं दिन में 4-5 घंटे काम करने के बाद भी जहां एक ही खेत पर काम करने वाले दो पुरुष किसान कहलाते हैं लेकिन उसी खेत पर काम करती हुई चार महिलाएं मजदूर कहलाती हैं, न किसान नहीं कहलाती हैं।

सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयास

सरकार समय-समय पर किसानों और कृषि की उन्नति के लिए अनेक योजनाएं बना रही है तथा उन्हें कार्यान्वित भी कर रही है। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं-

राष्ट्रीय किसान नीति, 2007 (एनपीएफ) बनाई गई है। इस नीति के तहत अन्य बातों के साथ किए गए उपबंधों में भूमि, जल, पशुपालन, मत्स्यपालन और जैव संसाधनों में परिसंपत्तिगत सुधार, समर्थन सेवाएं और आधुनिक प्रौद्योगिकियों के अनुप्रयोग जैसे-आदानों, कृषि जैव सुरक्षा प्रणालियों, उच्च गुणवत्तायुक्त बीजों और रोग मुक्त रोपण सामग्री की आपूर्ति, मृदा उर्वरकता और उसके स्वास्थ्य में सुधार, समेकित कीट प्रबंधन प्रणालियां, बाल गृह, बाल परिचर्या केंद्र, पोषक तत्व, स्वास्थ्य और संबंधित प्रशिक्षण के अंतर्गत महिलाओं के लिए समर्थन सेवा, उचित ब्याज दरों पर संस्थागत ऋण की सामयिक, पर्याप्त और सुलभ उपलब्धता, किसान अनुकूल बीमा उपकरण, सूचना और संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग, कृषिगत विस्तार का पुनरुद्धार करने के लिए किसान स्कूलों की स्थापना, देश भर में एमएसपी का प्रभावी कार्यान्वयन, कृषि बाजार अवसंरचना का विकास, किसान परिवारों के लिए गैर-कृषिगत ग्रामीण रोजगार पहल तथा ग्रामीण ऊर्जा आदि के लिए समेकित प्रयास शामिल हैं।

किसान ऋण कार्य योजना संपूर्ण देश में संचालन में है। यह वाणिज्यिक बैंकों, सहकारी बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा कार्यान्वित की जा रही है। इसे सरलीकृत करके एटीएम समर्थित ऋण कार्ड में बदल दिया है। इससे एक ही बार में प्रलेखन, सीमागत लागत वृद्धि, तय सीमा के अंदर कितनी ही बार आहरण करने की सुविधाएं शामिल हैं। शिविरों के माध्यम से भी संवितरण की आवश्यकता समाप्त होने के साथ-साथ बिचौलियों के बीच फंसने की संभावना कम हो जाती है।

किसानों को प्राकृतिक आपदाओं, कीटों और बीमारियों, जलवायु स्थितियों के कारण फसल के बर्बाद होने से बचाने के लिए संशोधित राष्ट्र कृषि योजना (एमएनएआईएस), और नारियल पाम बीमा योजना (सीपीआईएस) की योजनाओं सहित राष्ट्रीय फसल बीमा कार्यक्रम (एनसीआईपी) शुरू किया है। एकीकृत पैकेज बीमा योजना (यूपीआईएस) और पुनसंरचित मौसम आधारित फसल बीमा योजना (डब्ल्यूबीसीआईएस) भी बनाई गई है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (पीएमएफबीआई) के अंतर्गत किसानों को लाभ दिया जा रहा है।

किसान कॉल सेंटर (केसीसी) योजना की शुरूआत टॉल फ्री टेलीफोन लाइनों के माध्यम से कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों से संबंधित किसानों के सवालों का उत्तर देने के लिए 21 जनवरी, 2004 से आरंभ की गई है। देशव्यापी 11 अंको का नंबर 1800-800-1551 केसीसी को आवंटित किया गया। किसानों के प्रश्नों के उत्तर 22 स्थानीय भाषाओं में दिए जाते हैं। सप्ताह के सातों दिन प्रात: 6.00 बजे से रात 10.00 बजे तक कॉल सुने जाते हैं। इस योजना की शुरूआत से 31 दिसंबर, 2015 तक केसीसीसी में 231.41 लाख काल दर्ज की गई। किसानों के लिए आकाशवाणी, दूरदर्शन और निजी टेलीविजन चैनलों के माध्यम से स्पॉट प्रसारित किए जाते हैं। राष्ट्रीय कृषि ई-गर्वनेंस योजना (एनईजीपी-ए) का लक्ष्य देश के किसानों के लिए कृषि संबंधी सूचना तक समय पर पहुंच सुनिश्चित करने के लिए आईसीटी के उपयोग के माध्यम से भारत में कृषि का तेजी से विकास करना है।

सरकार ने संस्थागत ऋण प्रणाली को सक्रिय बनाने के लिए अनेक उपाय शुरू किए हैं ताकि उन्हें किसानों की जरूरतों के लिए अधिक अनुकूल बनाया जाए। प्रत्येक वर्ष कृषि ऋण लक्ष्य निर्धारित किया जाता है तथा वार्षिक बजट में इसकी घोषणा की जाती है। वित्तीय वर्ष 2015-16 के लिए कृषि ऋण का लक्ष्य 850 करोड़ रुपये रखा गया था। परंपरागत कृषि विकास योजना (पीकेवीवाई) के माध्यम से जैविक कृषि को प्रोत्साहित किया जाता है। वर्ष 2014-15 के दौरान कृषि के यांत्रिकरण पर सब-मिशन के अंतर्गत 988 फार्म मशीनरी बैंकों की स्थापना के लिए सब्सिडी जारी की गई। बीज विकास के लिए ऑटोमेटिक रूट के अंतर्गत 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) को मंजूरी दी गई है।

प्रधानमंत्री ग्राम सिंचाई योजना का उद्देश्य प्रत्येक किसान के खेत की सिंचाई और हर बूंद से अधिक फसल प्राप्त करना है। इसका उद्देश्य प्रत्येक किसान को जल की पहुंच को सुनिश्चित करना है। कृषि के विकास और किसानों के कल्याण हेतु सरकार ने मृदा स्वास्थ्य कार्ड

स्कीम के द्वारा संधारणीय आधार पर मृदा उर्वरकता में सुधार लाने, किसानों की आय बढ़ाने के लिए एकीकृत राष्ट्रीय कृषि बाजार के सृजन के लिए सहायता देने हेतु कदम उठाए हैं।

किसानों की स्थिति सुधारने हेतु सुझाव

पिछले कुछ वर्षों में कृषि विकास में कमी आई है। किसानों के लिए आवश्यक समर्थन पद्धतियों जैसे कि अनुसंधान, विस्तार, इनपुट आपूर्ति और आश्वस्त लाभप्रद विपणन के लिए अवसरों की समीक्षा और उनमें सुधार करने की आवश्यकता है। वर्तमान में सरकार की नीतियां जरूर बनती हैं लेकिन उनका सही क्रियान्वयन नहीं हो पाता, जिससे उनका उद्देश्य हासिल नहीं हो पाता। फसल बीमा योजना, कृषि सिंचाई योजना, परंपरागत कृषि विकास योजना, किसान संपदा योजना, स्वास्थ्य हेल्थ कार्ड आदि सरकारी योजनाओं से किसानों में उत्साहवर्धन अवश्य हुआ लेकिन इन योजनाओं का सही क्रियान्वयन नहीं हो पाया जिससे उद्देश्य हासिल नहीं हो पाया।

स्वतंत्र भारत से पूर्व और स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय किसानों की दशा में केवल 19-20 का ही अंतर नजर आता है। समृद्ध किसानों की गिनती मात्र उंगलियों पर की जा सकती है। किसानों को ऋण माफ किए जाने की व्यवस्था को और मजबूत तथा उदार बनाने की आवश्यकता है। ऋण माफी से निश्चित रूप से उन किसानों को लाभ हुआ है जो कभी अच्छे ऋण भुगतानकर्ता थे ही और उनमें यह प्रवृत्ति विकसित हुई कि ऋण की अदायगी करने से कोई लाभ नहीं है। किसी न किसी समय जब सरकार माफ करेगी तो इसका लाभ उन्हें मिलेगा ही। ऐसे में जो किसान समय से ऋण अदायगी करते रहे हैं, वे स्वयं को ठगा-सा महसूस करने लगते हैं। उनमें यह आस्था विकसित होने लगती है कि समय से कर्ज अदा करने से कोई लाभ नहीं है, जब बकायेदार सदस्यों का कुछ नहीं बिगड़ रहा है तो हमारा भी क्या बिगड़ेगा।

आज भारतीय किसान परावलंबी हो गया है। उसे बीज के लिए, उर्वरक के लिए, जुताई के लिए और बिक्री के लिए दूसरों पर निर्भर होना पड़ रहा है। इससे खेती की लागत बढ़ती जा रही है। छोटे किसानों के लिए खेती करना जहां असंभव-सा हो गया है वहीं उन्हें दूसरों के खेतों पर मजदूरी करने पर बाध्य होना पड़ रहा है। भारत के किसान और खेती भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ फिर से बने इसके लिए आवश्यकता है कि किसानों को पैदावार का उचित मूल्य मिलना चाहिए, उन्हें कम ब्याज पर समय पर ऋण मुहैया कराना चाहिए, फसल नष्ट होने पर बीमा या अन्य स्रोतों से उचित मुआवजा मिलना चाहिए। इसके साथ ही सिंचाई की व्यवस्था, समय पर और उचित कीमत पर उर्वरक की उपलब्धता हासिल होनी चाहिए।

यूरोपीय देशों में किसानों को प्रति हेक्टेयर सीधे-सीधे खेती करने के लिए सब्सिडी देती है। अमेरिका सहित सभी विकसित देशों में ऐसी व्यवस्था है। किसानों की आय बढ़ाने के लिए यूरोपीय देशों की तरह सरकार को एकमुश्त आमदनी सुनिश्चित करनी चाहिए। यह लाभ छोटे और मझोले किसानों को दिया जाना चाहिए। खेती के सहायक उद्योग पशुपालन को बढ़ावा देना होगा।

स्थानीय तौर पर उपलब्ध गोबर-पत्ती, फसल अवशेष, गोमूत्र, नीम आदि के बेहतर उपयोग और साथ ही जैव-विविधता और उचित फसल चक्रों को अपनाकर भूमि के प्राकृतिक उपजाऊपन को बनाए रखने और हानिकारक कीड़ों को दूर रखने का उद्देश्य प्राप्त करना चाहिए। इसके साथ ही फसलों और प्रत्येक फसल की किस्मों की विविधता और उचित फसल चक्र भी महत्वपूर्ण है। सहकारिता के माध्यम से किसान खेती को लाभकारी ही नहीं बल्कि रोजगार सृजित कर भारत की अपनी सांस्कृतिक विरासत को बचाने में भी सफल होंगे। कृषि की समृद्धि और पशुपालन की समृद्धि को एक दूसरे का पूरक मान कर आगे बढ़ना चाहिए। सभी पशुओं की भलाई पर ध्यान देना चाहिए और गाय-बैल रक्षा का विशेष प्रयास करना चाहिए। गांवों और पास के कस्बों में छोटे और कुटीर उद्योगों को अधिकतम प्रोत्साहन मिलना चाहिए।

कृषि क्षेत्र को मिलने वाली अपर्याप्त बिजली और सिंचाई में सार्वजनिक क्षेत्र के महंगे निवेश जैसे कृषि विकास में आने वाली बाधाओं को दूर करने के लिए संस्थागत सुधार की आवश्यकता है। कृषि उद्योग के आधुनिकीकरण, बाजारीकरण आदि के लिए भी सुधार की आवश्यकता है। कृषि पर लगने वाले अप्रत्यक्ष करों को भी कम करना होगा।

छोटे खेतों, जिसकी भारतीय कृषि क्षेत्र में बहुलता है कि उत्पादकता में सुधार लाने के लिए छोटी खेती के अनुकूल निरपेक्ष तकनीकों और सूचना प्रौद्योगिकी के प्रचार के सहारे से समाधान ढूढ़ने की आवश्यकता है। दीर्घावधिक निवेश के लिए किसानों के लिए औपचारिक तथा संस्थागत ऋण उपलब्ध कराने की चुनौती की ओर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। छोटे तथा सीमान्त किसानों को समय पर तथा वहनीय ऋण उपलब्ध कराना समावेशी विकास की कुंजी है।

बाजार के लिहाज से सरकार की ओर से ई-नाम यानी राष्ट्रीय कृषि बाजार की स्थापना की गई है। यदि इसे सफलतापूर्वक अंजाम दिया जाए तो किसानों को उनकी उपज का अधिकतम भाव दिलाया जा सकता है। कर्नाटक के एकीकृत बाजार प्लेटफॉम (यूएमपी) सफलता प्राप्त कर रही है। सरकार कृषि उपज विपणन समिति (एपीएमपी) कानून, 2003 में सुधार लाने की योजना बना रही है। इन सारे कदमों के माध्यम से किसानों को उनकी उपज का अधिक भाव दिलाया जा सकता

है। इसके साथ ही किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) के निर्माण के माध्यम से किसानों को लाभ दिया जा सकता है।

अंत में

कृषि क्षेत्र में गिरावट के बावजूद इसका भारतीय अर्थव्यवस्था में योगदान वैश्विक औसत 6.1 प्रतिशत से अधिक हैं। विश्व में कृषि योग्य भूमि के मामले में भारत 15.74 करोड़ हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि होने के कारण दूसरा स्थान है। दुनिया में मात्र 15 जलवायु क्षेत्र हैं, जबकि भारत में 20 कृषि जलवायु क्षेत्र है। भारत दुनिया के अग्रणी 15 कृषि उत्पादक निर्यातक देशों में शामिल है। यह सब भारतीय कृषि और किसान को गर्व अनुभव कराने के लिए प्रर्याप्त हैं। लेकिन इतना होते हुए भी किसान आत्महत्या करने पर मजबूर है। किसानों की आमदनी को दोगुना करने का ध्यान रखते हुए भारतीय किसान और भारतीय कृषि की दशा को सुधारने और इसे नई दिशा देने के लिए सरकार दृढ़ संकल्प है।

केंद्र सरकार ने वर्ष 2017-18 के बजट में ग्रामीण, कृषि और उससे जुड़े उद्योगों के लिए आवंटन 24 प्रतिशत बढ़ाकर एक लाख 87 हजार 223 करोड़ रुपये कर दिया था। वर्ष 2022 तक किसानों तथा कृषि क्षेत्र से जुड़े लोगों की आमदनी दोगुनी करने के लिए अनेक योजनाएं बनाई हैं। इनके माध्यम से किसानों की दशा में सुधार लाकर उन्हें नई दिशा दी जा सकती है। लेकिन इसके लिए आवश्यक है कि सही नीति बनाई जाए और सही नीयत से उसे कार्यान्वित किया जाए। हमारे यहां की एक प्रसिद्ध कहावत थी, ''उत्तम खेती मध्यम बान, करे चाकरी अधम समान'' अर्थात आजीविका श्रेष्ठ साधन कृषि है, व्यापार और नौकरी का स्थान उसके बाद आता है। इसे पुन: चरितार्थ किया जा सकता है।

◆

नन्हीं परी

काली चरण
वैयक्तिक सहायक

तब मेरी बेटी लगभग तीन वर्ष की रही होगी। मैं अपने परिवार सहित जयपुर (राजस्थान) के समीप ही स्थित अपने पैतृक गांव गया था। सोचा, बच्चों को गांव की पृष्ठभूमि से थोड़ा बहुत अवगत करा दूं। बच्ची को एक तालाब पर लेकर चला गया। तालाब में काफी पानी था और मछलियां भी बहुत थीं। बच्ची मछलियों को देखकर बहुत खुश हो रही थी। इसी बीच 8-10 भैंसों का एक झुंड वहां पानी पीने के लिए पहुंच गया। पानी पीते-पीते पता नहीं अचानक क्या हुआ कि दो भैंसे आपस में भिड़ गईं (लड़ने लगीं)। दोनों भैंसें बहुत हट्टी-कट्टी थीं। ऐसे लड़ रही थीं जैसे कि वे एक-दूसरे की जान की प्यासी हों। कोई भी हटने को तैयार न थी। आखिर एक भैंस दूसरी पर हावी हो गई और उसने दूसरी भैंस को खदेड़ दिया। शायद आप लोग भी यह जानते हों कि भैंसें जब कभी लड़ती हैं तो वे हारने वाली भैंस के पीछे दूर तक दौड़ती रहती हैं, यहां तक कि कई बार हारने वाली भैंस को किसी नाले इत्यादि में छलांग लगाने के लिए भी मजबूर होना पड़ जाता है।

हारने वाली भैंस आगे दौड़ रही थी और जीतने वाली उसके पीछे। दौड़ते-दौड़ते वे उस ओर आ गई जहां मैं अपनी बेटी को लेकर खड़ा था। लाख कोशिश करने के बावजूद भी मैं भैसों को रोक नहीं पाया। बचने के लिए हम भी इधर-उधर दौड़ने लगे और एक दूसरे से थोड़ी दूरी पर हो गए। आगे दौड़ती हुई भैंस अचानक मेरी बेटी से टकरा गई और मेरी बेटी जमीन पर गिर गई। मुझे लगा भैंस का खुर (पैर) मेरी बेटी के पेट के ऊपर आ गया है और शायद मेरी बेटी.....। मैं अपनी बेटी को देखने के लिए दौड़ा। भैंस का खुर मेरी बेटी के पेट से लगभग 2 इंच की ऊँचाई पर था और भैंस वहीं रूक गई थी। उसने पीछे दौड़ रही भैंस से होने वाले खतरे की कोई परवाह नहीं की। उसे पता था कि यदि पैर बेटी के पेट के ऊपर आ गया तो उसकी जान चली जाएगी। मैंने अपनी बेटी को उठाया, गले से लगाया और भगवान का धन्यवाद किया, उसने मेरी नन्हीं परी की जान बक्श दी थी।

◆